धर्म और राजनीति

भगवान् श्री रजनीश

जीवन जागृति आन्दोलन प्रकाशन
बम्बई. (१९७२)

प्रस्तुत पुस्तक

राजनीति कभी धर्म के ऊपर नहीं बिठाई जा सकती।

धर्म जीवन का लक्ष्य है, राजनीति साधन है।

धर्म है साध्य, राजनीति है साधन।

धर्म है मंजिल, राजनीति है मार्ग।

मार्ग कभी मंजिल के ऊपर नहीं हो सकता।

धर्म यदि जीवन-कला की आत्मा है, तो राजनीति जीवन-कला का शरीर हैं।

धर्म के बिना राजनीति सड़ा हुआ शरीर हो जाती है।

तथा राजनीति से विहीन धर्म भी अदृश्य और विलीन हो जाता है।

राजनीतिज्ञ चाहता है कि धर्म से छुटकारा हो।

क्योंकि धर्म दर्पण बन जाता है, जिसमें राजनीतिज्ञ के सारे विकार और सारे कैंसर दिखाई पड़ने शुरू हो जाते हैं।

राजनीति और सत्ता बुरे हाथों में जाती है, इसका जिम्मा अच्छे आदमी पर है, क्योंकि अच्छे आदमी जगह छोड़ देते हैं और बुरे आदमी के लिए जगह खाली कर देते हैं।

हिन्दुस्तान का भाग्य उसी दिन बदलेगा, जिस दिन हिन्दुस्तान के साधु, संन्यासी और भिक्षु, हिन्दुस्तान के अच्छे और सज्जन लोग सारी राजनीति को अपने हाथ में ले सकेंगे।

धर्म और राजनीति

भगवान् श्री रजनीश

सम्पादन :
स्वामी योग चिन्मय

जीवन जागृति आन्दोलन प्रकाशन, बम्बई,
१९७२
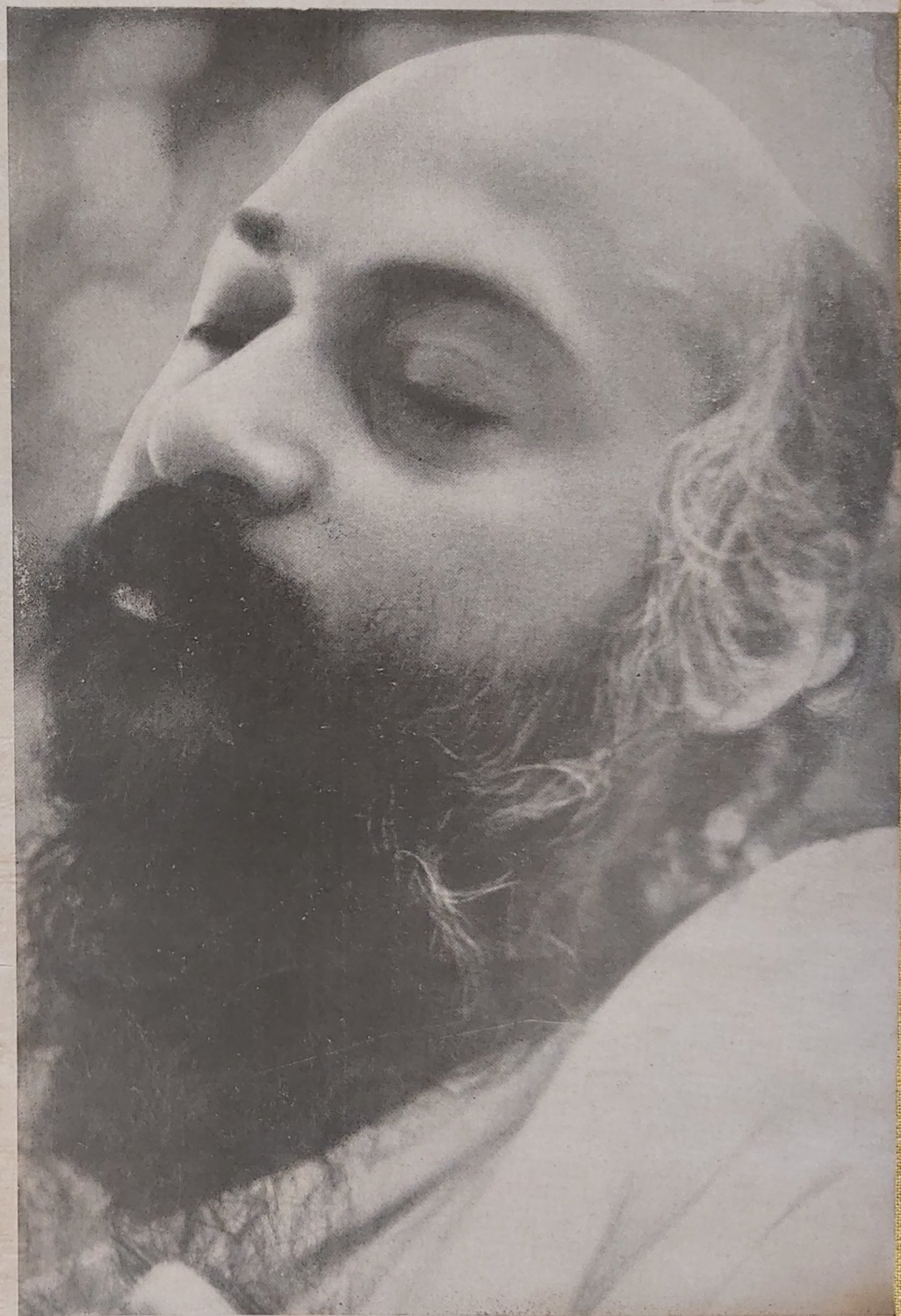
धर्म और राजनीति

(जबलपुर में भगवान् श्री रजनीश द्वारा दिया गया एक प्रवचन।)

धर्म और राजनीति

धर्म जीवन को जीने की कला है, जीवन को जीने का विज्ञान है । **हम जीवन को उसको पूरे अर्थों में कैसे जियें, धर्म उसकी खोजबीन है । धर्म यदि जीवन-कला की आत्मा है, तो राजनीति जीवन-कला का शरीर है ।** धर्म अगर आकाश है जीवन का, तो राजनीति पृथ्वी है । न आत्मा अकेली हो सकती है, न शरीर अकेला हो सकता है । शरीर न हो तो आत्मा अदृश्य हो जाती है और खो जाती है और आत्मा न हो तो शरीर सड़ जाता है, दुर्गंध देने लगता है । **धर्म के बिना राजनीति सड़ा हुआ शरीर हो जाती है . . .** लेकिन स्मरण रहे, **राजनीति से विहीन धर्म भी अदृश्य हो जाता है और विलीन हो जाता है ।** इसलिए धर्म और राजनीति पर कुछ कहने के पहले उन दोनों के बीच के एक आंतरिक संबंध को समझ लेना जरूरी है ।

जीवन में जो सक्रिय सत्ता है, जीवन को बदलने का जो सक्रिय आंदोलन है, जीवन को चलाने और निर्मित करने की जो व्यवस्था है, उस सबका नाम राज-नीति है । राजनीति के भीतरी अर्थ भी हैं, शिक्षा भी है । राजनीति के भीतर हमारे पारिवारिक संबंध भी हैं । राजनीति के भीतर हमारे जीवन के सारे अंतर्संबंध

हैं, लेकिन भारत का दुर्भाग्य समझा जाना चाहिये कि हजारों वर्षों से भारत में राज-नीति और धर्म के बीच कोई संबध नहीं रहा। भारत में राजनीति और धर्म दोनों जैसे विरोधी रहे हैं –– एक-दूसरे की तरफ पीठ किये खड़े। और यह आज की ही बात नहीं है, हजारों वर्षों से ऐसा हुआ है और इसका दुष्परिणाम भी हमने भोगा है। एक हजार वर्ष की गुलामी उसका दुष्परिणाम है। हिंदुस्तान गुलाम हुआ, क्योंकि हिन्दुस्तान के धार्मिक लोगों के मन में ऐसा नहीं लगा कि उन्हें कुछ करना है। धर्म का राजनीति से कोई संबंध न था। धार्मिक आदमी को लगता था, "कोई हो नृप, हमें क्या हानि ?" कोई भी हो राजा, हमें क्या प्रयोजन है ? कोई भी हो सत्ता में, हमें क्या विचार की बात है।

धर्म को हमने हजारों वर्षों से राजनीति निरपेक्ष बना दिया है। इसका बदला हिन्दुस्तान की राजनीति ने अभी-अभी लिया है। उसने राजनीति को धर्म निरपेक्ष बना दिया है। हजारों वर्षों तक हिन्दुस्तान का धर्म राजनीति निरपेक्ष था, उसका एक ही परिणाम होने को था। और अंतिम **परिणाम यह हुआ कि हिन्दुस्तान की राज-नीति अब धर्म निरपेक्ष है।** हजारों वर्षों तक धार्मिक आदमी कहता रहा कि राज-नीति से हमें कुछ नहीं लेना-देना है और राजनीति ने अभी २० साल पहले उसका बदला दिया और उसने कहा—धर्म से हमें कुछ नहीं लेना-देना है। **लेकिन कोई राजनीति धर्म निरपेक्ष कैसे हो सकती है ?** राजनीति के धर्म निरपेक्ष होने का क्या अर्थ हो सकता है ? एक ही अर्थ हो सकता है कि जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है, जो भी श्रेष्ठ है, राजनीति को उससे कोई प्रयोजन नहीं। मनुष्य के ऊंचे उठने की जो भी संभावनायें हैं, राजनीति उसके संबंध में कोई भी सक्रिय भाग अदा नहीं करना चाहती।

धर्म से निरपेक्ष होने का अर्थ होता है—सत्य से निरपेक्ष होना, प्रेम से निर-पेक्ष होना, जीवन के गहनतम ज्ञान से, निरपेक्ष होना। कोई भी राजनीति अगर धर्म से निरपेक्ष होगी, तो वह मनुष्य के शरीर से ज्यादा गहरा प्रवेश नहीं कर सकती और जो समाज केवल शरीर के आसपास जीने लगता है, उस समाज के जीवन में उसी तरह की दुर्गंध पैदा हो जायेगी जैसे मरी हुई लाश में पैदा हो जाती है। इधर बीस वर्षों में आजादी के बाद भारत का सारा जीवन दुर्गंध से, कुरूपता से, ग्लानि से, दुख और पीड़ा से भर गया। शायद मनुष्यजाति के इतिहास में कोई भी देश स्वतंत्र होकर इस भांति कभी पतित नहीं हुआ है। यह दुर्घटना कैसे घट सकी ? यह दुर्घटना घट सकी इसलिये कि **जीवन को ऊंचे उठाने वाले जो भी सिद्धांत हैं, उन सब सिद्धांतों का इकट्ठा नाम धर्म है।** और हमारे देश की राजनीति धर्म के प्रति निरपेक्ष है। धर्म का उससे कोई प्रयोजन नहीं।

लेकिन राजनीतिज्ञों को यह दोष देना गलत होगा। अगर हम पुराना इतिहास उठाकर देखें तो पता चलेगा कि हिन्दुस्तान के धार्मिक लोगों ने भी राजनीति के साथ इतना ही गलत व्यवहार किया है। वे आज तक यह कह रहे थे कि धर्म राजनीति से निरपेक्ष है। राज्य गुलाम हो कि स्वतंत्र, देश दुष्टों के हाथ में जाये कि अच्छे लोगों के हाथ में जाये, कि कौन हुकूमत करे कि किस भांति हुकूमत करे, इससे धार्मिक आदमी को कोई प्रयोजन न था। एक हजार वर्ष तक मुल्क गुलाम था और हिन्दुस्तान के साधु-संन्यासियों ने जरा भी इस गुलामी को उखाड़ फेंकने के लिये कोई प्रयास नहीं किया। एक हजार वर्ष की लंबी गुलामी के इतिहास में हिन्दुस्तान के संत ने एक बार भी यह आवाज नहीं दी कि इस मुल्क को आजाद होना है, क्योंकि वह कहता था कि हमें राजनीति से क्या प्रयोजन। **आश्चर्य की बात है कि अच्छे लोगों को गुलामी बुरी नहीं मालूम पड़ी।** आश्चर्य की बात है कि मुल्क की छाती पर दुश्मन सवार रहा, मुल्क का खून दुश्मन पीता रहा और मुल्क के साधु-संन्यासी स्वर्ग और परलोक की चर्चायें करते रहे। मंदिरों में बैठकर निमित्त महत्वपूर्ण है कि उपादान, इस पर वे विचार करते रहे। कितने नर्क होते हैं, सात या आठ, कि देवताओं के कितने रूप हैं, कि सिद्ध भगवान् का क्या स्वरूप है, इस संबंध में ये विचार करते रहे और मुल्क गुलाम और पतित होता चला गया।

हिन्दुस्तान गुलाम रहा आया, क्योंकि हिन्दुस्तान के धार्मिक लोगों के मन में ऐसा नहीं लगा कि उन्हें कुछ करना है। धर्म का राजनीति से कोई संबंध न था। एक हजार वर्ष तक हिन्दुस्तान के साधुओं और संन्यासियों और धार्मिक लोगों ने हिन्दुस्तान के भाग्य को बदलने के लिये कुछ भी नहीं किया। स्वाभाविक था कि जब धर्म इतना निरपेक्ष रहा हो राजनीति से तो जब राजनीति मुल्क में सत्ता में आई तो उसने कहा कि धर्म से हमें क्या लेना-देना है, धर्म से हमको कुछ भी लेना-देना नहीं है। यह बदला था। लेकिन गलत चीज का बदला भी कभी सही नहीं होता है, बदला भी गलत होता है। गलत चीज का जो बदला लेते हैं, वे भी गलत होते हैं।

पुनः अब विचारणीय हो गया है कि हम अपनी मनःस्थिति को पुनः तौल लें और विचार कर लें कि क्या राजनीति और धर्म को इतने दूर रखना हितकर है। क्या यह उचित है, क्या यह योग्य है ? राजनीतिज्ञों को यह सहूलियत की बात थी कि धर्म राजनीति से दूर रहे। क्योंकि जैसे ही राजनीतिज्ञ के सामने धर्म के प्रतीक खड़े हो जाते हैं, राजनीतिज्ञ को नीचे गिरने की आसानी कम हो जाती है। **धर्म एक चुनौती है, ऊपर उठने के लिये,** धर्म एक पुकार है कि निरंन्तर ऊपर उठते रहो, धर्म एक आह्वान है कि मनुष्य को ऊंचे से ऊंचे शिखरों पर चढ़ना है। राजनीतिज्ञ नहीं चाहता कि धर्म से राजनीति का कोई संबंध हो, क्योंकि **जैसे ही धर्म से राजनीति का**

संबंध होता है, राजनीतिज्ञ को अपने भीतर आमूल परिवर्तन करने की आवश्यकता पड़ जाती है। जैसे ही धर्म राजनीति से संबंधित होगा, वैसे ही राजनीतिज्ञ को अपने को बदलना पड़ेगा। राजनीतिज्ञ नहीं चाहता कि धर्म का कोई संबंध राजनीति से हो। क्योंकि जब धर्म से कोई संबंध नहीं होता तो उसे षडयन्त्र करने, उसे निम्नतम व्यवस्था देने, उसे चोरी और बेईमानी और असत्य का उपयोग करने की पूर्णतम सुविधा उपलब्ध हो जाती है। उसके पीछे कोई भी आह्‌वान नहीं रह जाता कि वह ऊपर उठे।

राजनीति धर्म से अलग होकर सिर्फ कूटनीति रह जाती है, राजनीति नहीं रह जाती। वह पालिटिक्स नहीं होती, सिर्फ डिप्लोमेसी होती है। वहाँ झूठ और सच में कोई फर्क नहीं रह जाता। हिटलर ने अपने कमरे के ऊपर लिख रखा था कि सत्य के अतिरिक्त और कोई नियम नहीं हैं।' (Truth is the Only Law) यह उसने अपने कमरे के बाहर लिख रखा था और हिटलर से ज्यादा झूठ बोलने वाला आदमी पृथ्वी पर कभी नहीं हुआ। एक मित्र उसके घर ठहरा हुआ था। उसने हिटलर को पूछा कि आप लिखे हुये हैं कि (Truth is the Only Law) सत्य एक-मात्र नियम है, लेकिन आप? हिटलर ने कहा कि हाँ, जिसे झूठ बोलना हो उसे घोषणा करनी पड़ती है कि सत्य एक मात्र नियम है। अगर झूठ ठीक से बोलना है तो सत्य की बातें करना जरूरी है। यह तो सीधी राजनीति है, हिटलर ने कहा।

राजनीति अगर जीवन के उच्चतम उसूलों की तरफ आकर्षित नहीं है, तो वह निम्नतम उसूलों के आधारों पर जियेगी, इसमें कोई संदेह नहीं है। एक बात ध्यान में रख लेना जरूरी है कि जिसके जीवन में ऊंचे से पुकार नहीं आती, उसके जीवन में नीचे से पुकार आनी शुरू हो जाती है। जीवन में दो तरह की पुकारें हैं: एक पुकार है मनुष्य के ऊपर से आनेवाली, पहाड़ों से आनेवाली। मनुष्य ने एक यात्रा पूरी की है पशुओं के साथ और मनुष्य को एक यात्रा करना है परमात्मा के द्वार तक। ऊपर से आने वाली पुकार उसे परमात्मा तक ले जाती है। नीचे से आने वाली पुकार, पशुओं की पुकार है, जो उसके भीतर छिपे हुए हैं। जो राजनीति यह कहेगी कि धर्म से हमारा कोई संबंध नहीं है, वह मनुष्य की निम्नतम जो वृत्तियां हैं, उनका खुला खेल हो जाती है।

राजनीतिज्ञ सदा चाहता है कि धर्म से दूर रहे, क्योंकि धर्म के सामने उसे आत्म-ग्लानि होनी शुरू हो जाती है। कुरूप आदमी नहीं चाहता कि आइने लगे हों मकान में। द्वार-द्वार पर, दरवाजे-दरवाजे पर बड़े-बड़े दर्पण लगे हों, यह कुरूप आदमी नहीं चाहेगा, क्योंकि कुरूप आदमी के सामने दर्पण का आ जाना बहुत दुखद हो जाता है, उसे बार-बार कुरूपता पीड़ा देने लगती है। धर्म एक दर्पण बन जाता है राजनीतिज्ञ

के सामने। धर्म के सामने खड़े होकर उसे बार-बार लगने लगता है कि मैं क्या हूँ? मैं कैसा हूँ? मैं कैसा गलत हूँ? **राजनीतिज्ञ चाहता है कि धर्म से छुटकारा हो,** राजनीतिज्ञ नहीं चाहता कि धर्म से सबंध रहे, क्योंकि धर्म दर्पण बन जाता है और उसमें राजनीतिज्ञ के सारे विकार और सारे कैंसर दिखाई पड़ने शुरू हो जाते हैं। इसलिये राजनीतिज्ञ खुश है कि धर्म से हमारा कोई सबंध नहीं है। और जो कमजोर धार्मिक हैं वे भी नहीं चाहते कि राजनीति से उनका कोई संबंध हो, क्योंकि **जो कमजोर धार्मिक हैं वे हमेशा उन चीजों से भयभीत होते हैं, जहां उनकी कमजोरी टूट जाने का डर होता है।** अगर एक कमजोर ब्रह्मचारी है, तो वह स्त्रियों से सदा भयभीत होगा। अगर एक कमजोर अपरिग्रही है, तो वह धन से डरेगा कि कहीं आसपास कोई धन दिखाई न पड़ जाये।

अगर एक व्यक्ति है जिसका त्याग कमजोर है और जबरदस्ती त्याग किये हुए है, तो वह हमेशा डरेगा कि कहीं सत्ता हाथ में न आ जाये। कमजोर आदमी हमेशा उस अवसर से डरता है, जिसमें उसकी कमजोरी टूट सकती है। जिस आदमी ने उपवास किया है, और जबरदस्ती उपवास किया है, वह भोजनालय के पास से निकलने में बहुत डरेगा। लेकिन जिस आदमी की आत्मा से उपवास आया है, उसके भोजनालय में भी बैठे रहने में कोई भय नहीं है, भय का कोई कारण नहीं है। लेकिन जिस आदमी ने जबरदस्ती उपवास कर लिया है और पूरे प्राणों में एक ही पुकार है कि भोजन, भोजन . . . उपवास करने वाले इसीलिये दिन भर मंदिरों में समगुजारते हैं, ताकि भोजनालय से इतनी दूर रहा जाये कि भोजन का ख्याल भी न आये, ऐसी जगह बैठकर समय गुजार देना है। क्योंकि भीतर तो भोजन का स्मरण आ रहा है। भोजन का जिसके मन में भय है और उपवास कर लिया है, ऐसा आदमी कमजोर है। और इस कमजोरी से वह भोजन से भयभीत होगा और डरेगा।

कमजोर धार्मिक व्यक्ति राजनीति से सदा डरेंगे, क्योंकि उन्हें मालूम है कि कि उनके हाथों में ज्योंही शक्ति आई कि उनकी सारी धार्मिकता बह जायेगी और उनके भीतर जो असली आदमी है, बुरा आदमी छिपा है, वह प्रकट हो जायेगा। **बुरा आदमी हमेशा ताकत में प्रगट होता है, कमजोरी में कभी प्रगट नहीं होता।** बुरे आदमी के प्रकट होने के लिये ताकत चाहिये। एक गरीब आदमी है, वह कह सकता है कि मुझे महलों से कोई प्रयोजन नहीं है, लात मार सकता हूं महलों को, क्योंकि महल उसके पास नहीं है। लेकिन कल अगर उसे महल मिलने की सुविधा उपलब्ध हो जाये, फिर बहुत मुश्किल होगा यह कहना कि मैं महलों को लात मारता हूं। फिर पता चलेगा कि यह बहुत कठिन है। पैसे पास में न हों तो धन को गाली दी जा सकती है, लेकिन धन पास में हो तब धन का उपयोग करने का मन होता है,

तब धन को गाली देना मुश्किल होता है। जिन लोगों के पास धन था और धन को वे छोड़ सके, उन लोगों के धर्म में तो कोई बल था। महावीर के धर्म में कोई बल रहा होगा। राज्य था हाथ में, उसे लात मार सके। उनमें तो कोई बल रहा होगा, लेकिन जिनके हाथ में राज्य नहीं है, वे बहुत भयभीत होते हैं। फिर अगर राज्य हाथ में आ जाये तो उनके भीतर जो बुरा आदमी छिपा होता है, वह पुनः प्रकट होना शुरू हो जायेगा। उसके पास ताकत नहीं है, इसके लिये वह दबा हुआ है। अगर उसके हाथ में ताकत आ जायेगी तो वह प्रगट होगा। तो कमजोर धार्मिक आदमी भी डरता है कि सत्ता से जितना दूर रहे उतना अच्छा।

हम अभी ही देख चुके हैं कि गांधी जी के पीछे चलने वालों की एक अच्छी जमात थी। वे अच्छे लोग थे, हिन्दुस्तान ने कभी कल्पना भी न कि थी कि ये सारे लोग बुरे साबित होंगे। जब तक उनके हाथ में सत्ता न थी, ये जेल जाते थे और झोली लगाकर गांवों में क्रांति का नारा देते थे, तब तक उनके भीतर सचाई और अच्छे आदमी के दर्शन हुए थे और कोई यह नहीं कह सकता था कि ये लोग बुरे थे, वे लोग अच्छे मालूम पड़ते थे। लेकिन ये लोग कमजोर अच्छे आदमी थे। ताकत आते ही अच्छाई चली गई और बुराई प्रगट हो गई। हिन्दुस्तान का बीस साल का इतिहास यह बताता है कि कमजोर अच्छे आदमी को ताकत मिलने पर उसकी कमजोरी प्रकट हो गई और अच्छाई बह गई। जैसे ही उनके हाथ में ताकत आई, दिल्ली का सिंहासन आया, वैसे ही वे साधारण आदमी साबित हुए, जैसे दूसरे कोई भी आदमी साबित होते। बल्कि एक बात आश्चर्यजनक हुई कि वे साधारण आदमी से भी बुरे साबित हुये। और उसका एक ही कारण था कि भीतर सच्चाई नहीं थी। सचाई ऊपर से ओढ़ी गई थी। सचाई ऊपर से सीखी गई थी, सचाई ऊपर से ढाँकी गई थी। भीतर! ... भीतर एक साधारण आदमी था– कमजोर वासनाओं से भरा हुआ। ऊपर से एक अच्छा आदमी बन गया, भीतर काला आदमी था। वे खादी के सफेद कपड़े सब ऊपर से थे। उन सफेद कपड़ों ने भीतर के काले आदमी को छिपाने में सुविधा दी थी, लेकिन उसे मिटा नहीं सके थे। कोई कपड़ा भीतर के आदमी को नहीं मिटा सकता। भीतर का आदमी मिट जाये तो काले कपड़ों से भी उसकी रोशनी प्रकट होनी शुरू हो जाती है, जो भीतर है। और भीतर अगर काला आदमी बैठा हो, तो सफेद से सफेद कपड़े भी रुकावट डालने में असमर्थ हैं, लेकिन ऊपर से धोखा पैदा होता है कि सफेद कपड़े पहननेवाला आदमी जरूर अच्छा आदमी होगा, लेकिन जब तक उसके हाथ में ताकत नहीं है तब तक यह भ्रम पाला जा सकता है। हाथ में ताकत आते ही उसके सफेद कपड़े इतने मजबूत नहीं हैं कि उसके भीतर के असली आदमी को रोकने में समर्थ हो जायें।

दुनिया के सारे कमजोर धार्मिक आदमी सदा भयभीत रहे हैं कि सत्ता उनके हाथ में न आ जाये। इसीलिये उन्होंने कहा है कि राजनीति से उनको कुछ नहीं लेना है। धर्म अलग बात है, राजनीति अलग बात है। **राजनीतिज्ञ डरता है धर्म से, धार्मिक डरते हैं राजनीति से।** और इसलिये एक खाई पैदा हो गई है, धर्म और राजनीति के बीच। मैं आपसे कहना चाहता हूं कि जब तक यह खाई है, तब तक अच्छी दुनिया निर्मित नहीं की जा सकती? क्यों? अच्छी दुनिया दो कारणों से निर्मित नहीं हो सकती। एक: **जो राजनीति धर्म के आदर्शों से प्रभावित नहीं होगी, वह मनुष्य को कहां ले जायेगी?** वह कहां ले जा सकती है? किस यात्रा में मनुष्य को प्रवेश करायेगी? मंजिल क्या है? उसके पास कोई मंजिल नहीं है। तब राजनीतिज्ञ उस पागल आदमी की तरह है, जो दौड़ता तो बहुत है लेकिन अगर उससे पूछें कि कहां जा रहे रहे हो, तो वह कहने में असमर्थ है कि वह कहाँ जा रहा हैं। उसे पता नहीं है, वह कहेगा कि मुझे रोको मत। मुझे जल्दी है, मुझे जाने दो। और अगर हम उससे कहें कि तुम कहां जा रहे हो, तो कहेगा कि मुझे इसके लिये समय नहीं है। मुझे पता भी नहीं है कि मुझे कहां जाना है, लेकिन मुझे रोको मत। मैं जल्दी में हूं, मुझे कहीं जाना है।

राजनीति जो धर्म के बिना है, भागती हुई दिखाई पड़ेगी, लेकिन कहां? उसे जाना कहां है? क्योंकि जीवन की मंजिल तो धर्म है। जीवन में जो भी मंजिल है, उसी का नाम धर्म है। जीवन को जहां पहुंच जाना चाहिये, उसका नाम धर्म है। ऐसी राजनीति कोल्हू के बैल की तरह वहीं-वहीं घूमकर वापस आयेगी, जहां से उसने चलना शुरु किया था, क्योंकि जिस आदमी को यह पता नहीं है कि मुझे कहां जाना है, उसका सब जाना एक चक्कर में होता है। वह चक्कर में घूमता है और वापस लौट आता है। नहीं, राजनीति धर्म के अभाव में कहीं भी नहीं ले जा सकती है। और यह भी मैं आपको कह दूं कि धर्म भी राजनीति के बिना जीवन को बदलने में एकदम नपुन्सक साबित होता है। क्योंकि जिंदगी को बदलना है तो शिक्षा बदलनी पड़ेगी, जिंदगी बदलनी है तो जीवन के सारे कानून बदलने पड़ेंगे। **गलत हो शिक्षा, गलत हो अर्थ की व्यवस्था, गलत हो जीवन के सारे नियम और धर्म चिल्लाता रहे कि लोगों को अच्छा होना चाहिये तो वह चिल्लाहट अंधेरे में खो जायेगी** और आदमी अच्छा नहीं हो सकेगा। जिस समाज में बुराई के लिये पुरुस्कार मिलता हो और अच्छाई के लिये पाप जैसा भुगतान भोगना पड़ता हो, उस समाज में धर्म कितना ही चिल्लाता रहे कि लोगों को अच्छा होना चाहिये तो भी लोग अच्छे नहीं हो सकेंगे।

धर्म तभी जीवन की व्यवस्था बदल सकता है जब राजनीति से भयभीत न हो, भागे न, पलायनवादी (Escapist) न हो, वह यह न कहे कि हम भाग जायेंगे। जिस दिन

धर्म ऐसे साधु पैदा करेगा जो सैनिक भी हो सकते हैं, **जिस दिन धर्म ऐसे संत पैदा करेगा जो सत्ता पर भी पैर रखकर जीवन को संचालित कर सकते हैं, तभी हम जीवन को बदलने में समर्थ हो सकते हैं, अन्यथा नहीं।**

गांधी ने एक हिम्मत की थी और इस लिहाज से गांधी का नाम दुनिया में एक विशेष आदर से लिया जाना चाहिये। **गांधी शायद दुनिया के पहले धार्मिक आदमी थे जिन्होंने राजनीति से भागने की कमजोरी जाहिर नहीं की।** उन्होंने हिम्मत के साथ खड़े होकर एक संघर्ष किया। हिन्दुस्तान के साधु संतों को यह बहुत बुरा लगा। हिंदुस्तान के साधु संतों को लगा कि यह कैसा महात्मा है, यह कैसा धार्मिक आदमी है। नहीं यह धार्मिक आदमी नहीं हो सकता जो राजनीति के बीच में खड़ा है। यह कैसा धार्मिक आदमी है? धार्मिक आदमी तो हम उसे कहते हैं, जो राजनीति से भाग जाता है, जो राजनीति को छोड़ देता है। ये महात्मा गांधी कैसे धार्मिक आदमी हैं। हिन्दुस्तान के लोगों को बहुत मुश्किल से यह स्वीकृत हो पाया कि गांधी धार्मिक आदमी हैं।

गांधी ने एक बड़ी हिम्मत की। लेकिन वह हिम्मत भी अधूरी पड़ गई और मरने के पहले गांधी पूरी हिम्मत नहीं जुटा पाये और उनकी कमजोरी अंत-अंत में प्रकट हो गई। हिन्दुस्तान को जब राज्य मिला तब गांधी के मन में हिन्दुस्तान की वह पुरानी आदत फिर बल पकड़ गई और गांधी ने खुद सत्ता न लेकर दूसरों के हाथों में सत्ता दे कर भारत का जो अहित किया है उसको हजारों साल तक पूरा नहीं किया जा सकता। अगर गांधी को हिन्दुस्तान की ताकत मिली थी और **गांधी अगर स्वयं सत्ता में गये होते तो हिंदुस्तान का भाग्य दूसरा हो सकता था।** यह जो हमने पतन की बीस सालों की लंबी कथा देखी, यह जो हमने नरक की यात्रा देखी, यह जो आदमी का चरित्र रोज-रोज नीचे गिरते देखा, हो सकता था कि गांधी स्वयं सत्ता में होते तो यह नहीं हो पाता, लेकिन **अंतिम क्षणों में गांधी हिम्मत खो गये।** और वह पुराने हिन्दुस्तान का जो महात्मा है और जो हिन्दुस्तान की पुरानी आदत है, वह जो राजनीति को हमेशा गाली देनेवाला चित्त है, वह अंत में प्रभावी हो गया। आखिर में जब सत्ता गांधी के हाथ में आई तो वे डांवाडोल हो गये। उनके सामने दो ही विकल्प थे, या तो **उन्हें हिन्दुस्तान की नजरों में सदा के लिये धार्मिक न होने की हिम्मत करनी पड़ती,** धार्मिक होने का ख्याल छोड़ना पड़ता। इस बात का डर था कि हिन्दुस्तान फिर शायद उनको महात्मा न कहता। और जब गांधी ने सत्ता छोड़ दी तो हिन्दुस्तान के लोग बहुत खुश हुये और हमने जगह-जगह यह कहा कि यह है सच्चा महात्मा, इतनी बड़ी ताकत आई और उन्होंने सिंहासन पर लात मार दी, लेकिन हमें पता नहीं था कि यह गांधी का सिंहासन पर लात मारना हमारे

भाग्य पर लात मारना सिद्ध होगा। हम ऐसे अभागे लोग हैं कि हम अपने दुर्भाग्य की निरंतर प्रशंसा करते हैं। हिन्दुस्तान में अगर थोड़ी सी समझ होती तो हिन्दुस्तान भर में उपवास किये जाने चाहिये थे, अनशन किये जाने चाहिये थे, गांधी के खिलाफ और सारे हिन्दुस्तान को जोर डालना था कि एक अच्छे आदमी के हाथ में ताकत जा सकती है, तो आप सत्ता में बैठें। हम किसी और को सत्ता नहीं देना चाहते। लेकिन हिन्दुस्तान यह न कर सका, क्योंकि हिन्दुस्तान की पुरानी आदत। उसको बहुत अच्छा लगा कि ये महात्मा हैं, ये कैसे सत्ता में जा सकते हैं। बल्कि हम खुश हुये और हमने गांधी की प्रशंसा की।

सारे देश को गांधी पर दबाव डालना था कि चाहे तुम महात्मापन को छोड़ दो, लेकिन हिन्दुस्थान को एक मौका मिला है, अच्छे आदमी के हाथ में आने का, उसे हम नहीं छोड़ना चाहते। चाहे तुम्हें नरक जाना पड़े और तुम्हारा मोक्ष छूट जाये तो इसकी फिक्र मत करो इस गरीब मुल्क के लिये; इस दीन-हीन मुल्क के लिये इतना त्याग और कर दो। एक दफे और जन्म ले लेना और तपश्चर्या कर लेना। लेकिन हिन्दुस्तान के एक भी आदमी ने यह नहीं कहा, क्योंकि हिन्दुस्तान की मूर्खता बहुत पुरानी है, बहुत प्राचीन है।

हमारे मन में यह ख्याल है कि अच्छे आदमी को राजनीति में जाना ही नहीं चाहिये। हम बड़े अजीब लोग हैं। हम बहुत कन्ट्राडिक्टरी (असंगत) लोग हैं। हम एक तरफ कहते हैं कि राजनीति बुरी होती चली जा रही है, एक तरफ हम गाली देते हैं कि राजनीति गुंडागिरी होती चली जा रही है और दूसरी तरफ हम कहते हैं कि अच्छे आदमी को राजनीति में भाग नहीं लेना चाहिये। इन दोनों बातों में क्या कोई संगति है! जब आप कहते हैं कि राजनीति में अच्छे आदमी को भाग नहीं लेना चाहिये तो फिर दोष क्यों देते हैं कि राजनीति में बुरे लोग घुस गये हैं। इन दोनों बातों में मेल क्या है, तुक क्या है, संगति क्या है? या तो यह मान लीजिये कि अच्छे आदमी को राजनीति में भाग नहीं लेना है, तो फिर बंद कर दीजिये यह निन्दा और आलोचना कि राजनीति में बुरे लोग हैं। बुरे लोगों के सिवाय वहां कोई हो कैसे सकता है, क्योंकि आप अच्छे आदमी को तो राजनीति में जाने नहीं देना चाहते हैं।

लेकिन हम अजीब लोग हैं, एक तरफ हम कहेंगे कि अच्छे आदमी को राजनीति में नहीं जाना है और जब कोई अच्छा आदमी राजनीति की ओर जाने लगे तो लोग कहेंगे कि अरे! यह आदमी भी डूबा, यह आदमी भी गया, हो गया भ्रष्ट। और दूसरी तरफ हम कहेंगे कि राजनीति बुरे लोगों के हाथों में जा रही है – किसके हाथ में जायेगी? क्या आप चाहते हैं कि राजनीति किसी के हाथों में न जाये? अगर अच्छे आदमी वहां नहीं होंगे तो बुरे आदमी के हाथों में राजनीति जायेगी। और मैं

आपसे कहता हूं कि **इसका जिम्मा अच्छे आदमी पर है कि राजनीति बुरे हाथों में जाती है,** क्योंकि अच्छे आदमी जगह छोड़ देते हैं और बुरे आदमी के लिये जगह खाली कर देते हैं।

गांधी ने सबसे बड़ा काम किया कि उन्होंने मुल्क की राजनीति में भाग लिया, लेकिन यह प्रयास ऐसा था कि जैसे कोई आदमी डूब रहा हो और मैं उसे बचाने जाऊँ और उसे बचाकर किनारे तक ले आऊं और ठेठ किनारे पर छोड़कर फिर बाहर निकल जाऊं, और वह किनारे पर डूब जाये जो मंझधार में डूब रहा था। गांधी ने हिन्दुस्तान को बचाने की कोशिश की, लेकिन आखिरी क्षणों में गांधी डगमगा गये और गांधी ने हिन्दुस्तान की सत्ता दूसरों के हाथों में देकर नुकसान पहुंचाया।

जिन लोगों के हाथों में ताकत आई, उन लोगों ने पहले तो सबसे बड़ा काम यह किया कि धर्म से राजनीति का संबंध तुड़वा दिया। नेहरू के मन में धर्म के लिये कोई जगह नहीं थी, नेहरू के चित्त में धर्म के लिये कोई आदर नहीं था। नेहरू शुद्ध राजनैतिक व्यक्ति थे, नेहरू और गांधी जैसे विरोधी व्यक्ति खोजना कठिन हैं जो एक ही साथ शिष्य और गुरु की तरह समझे जाते हों। गांधी बिल्कुल अलग तरह के आदमी है, नेहरू बिल्कुल अलग तरह के आदमी हैं। गांधी के लिये अहिन्सा जीवन और मरण का प्रश्न है, नेहरू के लिये अहिन्सा पालिसी से ज्यादा नहीं है—एक तरकीब, एक राजनैतिक चाल। गांधी एक धार्मिक व्यक्ति है, नेहरू एक शुद्ध राजनैतिक व्यक्ति है। एक धार्मिक व्यक्ति के हाथों में ताकत जाती तो मुल्क का भाग्य बदलता, हम और ढंग से सोचते। लेकिन वह ताकत एक धार्मिक आदमी के हाथों में नहीं जा सकी, क्योंकि धार्मिक आदमी हमेशा कमजोर साबित हुआ और उसने कहा कि मैं ताकत कैसे ले सकता हूं। नहीं, मैं ताकत नहीं ले सकता, मैं लात मारता हूं राजसिंहासन पर।

राजसिंहासन राजनीतिज्ञ के हाथों में चला गया और फिर गांधी के बड़े शिष्य हैं विनोबा। एक तरफ गांधी ने राजनीति से अपना हाथ अलग किया, सत्ता दूसरों के हाथ में दी, दूसरे हिन्दुस्तान में विनोबा ने यह काम किया कि अच्छे आदमी को राजनीतिक में नहीं जाना चाहिये, उसे भूदान का काम करना चाहिये, सर्वोदय का काम करना चाहिये। जो बचे-खुचे अच्छे लोग राजनीति में थे, उन्हें विनोबा बुरी तरह ले डूबे, जयप्रकाश जैसे अच्छे आदमी को डुबा दिया उन्होंने। पहले तो अच्छे आदमी, गांधी की हिम्मत टूट गई, फिर विनोबा ने अच्छे आदमी को कहा कि राजनीति में जाना नहीं है तुम्हें। तुम्हें तो गांव की सेवा करनी है। यह करना है, वह करना है। राजनीति

में तुम्हें नहीं जाना है। **विनोबा ने ऐसे अच्छे लोगों का रोक लिया राजनीति में जाने से।** अब हिन्दुस्तान की राजनीति अगर बुरे लोगों के हाथ में पड़ गई तो जिम्मेवार कौन है? मैं नंबर एक गांधी को, नंबर दो विनोबा को जिम्मेवार ठहराता हूं।

मैं आपसे यह कहता हूं कि हिन्दुस्तान की राजनीति हर पांचवे वर्ष और रद्दी हाथों में जायेगी। क्यों? क्योंकि नियम है जीवन का और वह यह है कि **अगर बुरे आदमी को ताकत से हटाना हो तो आपको बुरा होना पड़ता है। इसके बिना आप उसको हटा नहीं सकते।** अगर वह चालाक है तो आपको ज्यादा चालाक होना चाहिये; अगर वह बेईमान है तो आपको ज्यादा बेईमान होना चाहिये। अगर वह छुरे से धमकी देता है, तो आपको पिस्तौल से धमकी बताना चाहिये। तो उस आदमी को आप हटा सकते हैं। पिछले १५–२० सालों में हर ५ साल के बाद पुराने आदमी को हटाया गया और उनकी जगह जो लोग गये वे उनसे भी बदतर थे। और आप यह पक्का मानिये कि उनको उनसे भी बदतर लोग ही हटा सकेंगे। ३० सालों में हिन्दुस्तान में गुंडों का राज्य सुनिश्चित है? ३० साल के भीतर हिन्दुस्तान में सिवाय गुंडों के ताकत में कोई नहीं पहुंच सकेगा और अगर उनको हटाना पड़े, तो आपको उनसे बड़ा गुन्डा सिद्ध होना पड़ेगा, इसके अतिरिक्त और कोई योग्यता नहीं रह जाने वाली है।

आज भी हालत यह है कि जो लोग हुकूमत से हट गये हैं, वे सिर्फ इसीलिये हट गये हैं कि उनसे ज्यादा बुरे लोग वहां पहुंच गये हैं। और अगर कल ये लोग उनको हटा सकें तो आप पक्का समझना कि ये उनसे ज्यादा बुराई ५ साल में सीख गये हैं इसलिये हटा पाये, अन्यथा हटा नहीं सकते थे। मगर **यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है कि रोज मुल्क बुरे-से-बुरे हाथों में चला जाये।**

दूसरा नियम भी मैं आपसे कहना चाहता हूं कि अगर एक बुरे आदमी को हटाना हो तो आपको उससे बुरा होना पड़ता है और अगर एक अच्छे आदमी को हटाना हो तो आपको उससे अच्छा आदमी साबित होना पड़ता है, तब आप उसे हटा सकते हैं। ये दोनों नियम एक साथ ही काम करते हैं। अगर हिन्दुस्तान की राजनीति में हमने अच्छे लोगों को जगह दी होती, तो हिन्दुस्तान ३० साल में अच्छे-से-अच्छे लोगों के हाथों में पहुंच गया होता, क्योंकि एक अच्छे आदमी को हटाने के लिये जिस आदमी को हमें आगे लाना होता वह उससे अच्छा आदमी सिद्ध होता तभी हटा सकता था अन्यथा नहीं हटा सकता था। लेकिन **अच्छे आदमी को** राजनीति में नहीं जाना है, **धार्मिक आदमी की राजनीति में नहीं जाना है, तो फिर राजनीति अधार्मिक हाथों में जायेगी, तो परेशान क्यों होते हैं,** फिर पीड़ित क्यों होते हैं।

अच्छे आदमी ने मनुष्य जाति के कुछ नुकसान किए हैं, उनमें से एक नुकसान यह है कि अच्छा आदमी हमेशा बुरे आदमी के लिए जगह खाली कर देता है। वह

हमेशा हट जाता है और कहता है कि आप आ जाइये, क्योंकि मैं तो अच्छा आदमी हूं। मैं झगड़ा-झंझट नहीं करता हूं। अच्छा आदमी भगोड़ा है, अच्छा आदमी भाग जाता है, खड़ा होकर टक्कर नहीं ले पाता। क्या किया जाए? हमारी अब तक की जो मूल्य की दृष्टि थी, अब तक की जो वेल्यू थी, वह बदलनी पड़ेगी। हमें यह कहना होगा कि **धार्मिक आदमी का एक लक्षण यह भी है कि वह बुराई के साथ टक्कर लेगा और जहां भी बुराई होगी, वह संघर्ष में खड़ा रहेगा, भागेगा नहीं।** धार्मिक आदमी का एक लक्षण हमें यह भी बताना होगा कि वह बुरे आदमी के हाथों जीवन की सत्ता को न जाने दे। हमें अच्छे आदमी की योग्यता एक यह भी माननी होगी कि वह बुराई से लड़ने के लिये सदा तत्पर है: चाहे राजनीति, चाहे धर्म, चाहे समाज, चाहे जीवन का कोई भी पहलू हो बुरे आदमी को जगह देने को वह तैयार नहीं होगा।

इसी संबंध में मैं आपसे यह भी कहना चाहता हूं कि हमारे मुल्क के बाहर पश्चिमी मुल्कों की समाज व्यवस्था हमसे बहुत बेहतर हो सकी, उनके राज्य की व्यवस्था हमसे बहुत संगत हो सकी, उन्होंने जीवन में ज्यादा समृद्धि, ज्यादा व्यवस्था, ज्यादा सुनियोजन उपलब्ध कर लिया, उसका एक ही कारण है कि दुनिया के दूसरे मुल्कों में अच्छा आदमी राजनीति से भयभीत नहीं है। तो **दुनिया के दूसरे मुल्कों के जो अच्छे आदमी हैं, प्रथम कोटि के वे राजनीति में पहुंच जाते हैं। हमारे यहां प्रथम कोटी का आदमी जंगल चला जाता है,** तपश्चर्या करने लगता है, राजनीति से बच जाता है। अच्छा आदमी भाग जाता है जिन्दगी को छोड़कर। अच्छा आदमी रामधुन करता है, रामायण पढ़ता है – ऐसे सब काम करता है, लेकिन अच्छा आदमी जिन्दगी के संघर्ष से हट जाता है। जब अच्छे आदमी जिन्दगी के संघर्ष से हट जायेंगे, तो जिंदगी को अच्छा कौन बनायेगा, जिन्दगी को बदलेगा कौन!

ताकत बुरे आदमियों के हाथ में और उपदेश अच्छे आदमियों के हाथ में, यह स्थिति बहुत सुखद नहीं है। ताकत बदलती है। ताकत है बुरे आदमी के हाथ में और अच्छे आदमी के हाथ में है एक ही काम: उपदेश। कौन सुनता है उसका उपदेश? उसके उपदेश बूढ़े लोग सुनते हैं, जिनका जिन्दगी से कोई संबंध नहीं रह गया है। मंदिरों में जाइये, मस्जिदों में जाइये, बूढ़े और बूढ़ियाँ वहां इकट्ठे हैं। ये वे औरतें वहां इकट्ठी हैं, जिनको घर में बातचीत के लिए मौका नहीं मिलता है, वे मंदिरों में आती हैं। **लेकिन मंदिर में युवक कहां है, जवान कहां हैं, जो जिन्दगी को बदलते और बनाते हैं।** बच्चे कहां हैं, जिनसे जिन्दगी बनती और विकसित होती है। वे कहा हैं, वहां। वे उपदेश सुनने को तैयार नहीं हैं।

जिन्दगी को बदलना है तो अच्छे लोगों के हाथ में सत्ता का होना अनिवार्य है। इसलिए मैं कहता हूं कि गलत है ये बातें विनोबा की कि अच्छे आदमी सत्ता से भागें।

मेरा तो अपना विचार यह है कि गाँव-गाँव में नागरिक समितियां होनी चाहिए, एक-एक मुहल्ले में नागरिक समितियां होनी चाहिए। और यह नागरिक समिति तय करेगी कि हमारे मुहल्ले में कौन अच्छा आदमी है, उससे हम प्रार्थना करें कि तुम इलेक्शन (चुनाव) में खड़े हो जाओ। हम उस आदमी को वोट नहीं देंगे जो खुद अपने आप खड़ा हो जाता है और लोगों से आकर कहता है कि मैं अच्छा आदमी हूं, मुझे वोट दो। हम यह मानते हैं कि जो आदमी खुद अपने को अच्छा कहता है वह आयोग्यता सिद्ध करता है। वह आदमी अच्छा आदमी नहीं है, जो अपने को अच्छा कहता है, वह अयोग्यता का एक लक्षण होना चाहिए। यह डिसक्वालिफिकेशन होना चाहिये कि जो आदमी खुद आकर कहता है कि मैं अच्छा आदमी हूं, मुझे वोट दो। गांव के लोगों को कहना चाहिए कि क्षमा करिये, हम आपको वोट इसीलिए नहीं देंगे कि आप खुद यह कहते हैं कि हम अच्छे आदमी हैं। हम उस आदमी को वोट देंगे, जो कहता है मेरी कोई मर्जी नहीं है, लेकिन गांव जोर डालता है कि मुझे खड़ा होना चाहिये तो मैं खड़ा हो जाता हूं।

एक-एक गांव में नागरिक समिति होनी चाहिए। एक-एक मुहल्ले में नागरिक समिति होनी चाहिए, जो यह निर्णय करे कि हम किस आदमी को भेजें, क्योंकि हमारा अच्छा आदमी पुरानी आदत के कारण पीछे खड़ा रहता है, वह आगे आता ही नहीं। उसको अच्छा भी नहीं मालूम पड़ता कि खुद ही डंका पीटता हुआ, घंटा पीटता हुआ चिल्लाता फिरे कि मैं अच्छा आदमी हूं, कि मैं इलेक्शन में खड़ा हूं, आप मुझे वोट दें। जो आदमी अपने आप यह कह सकता है कि मैं इलेक्शन में खड़ा हूं, मैं अच्छा आदमी हूं, चाहे वह कांग्रेस का हो, चाहे वह जनसंघ का हो, चाहे वह कम्युनिस्ट हो, चाहे वह सोशलिस्ट हो, वह आदमी गलत है। उसे भूल कर वोट मत देना, क्योंकि **जो आदमी अपना प्रचार कर रहा है, वह ठीक नहीं हो सकता। यह आदमी खतरनाक है।**

एक-एक मुहल्ले की नागरिक समिति होनी चाहिए, जो अच्छे आदमी के पास जाये और उससे प्रार्थना करे कि हम तुम्हें खड़ा करेंगे और अगर तुम खड़े नहीं होते तो हम अनशन करेंगे। हम तुम पर दबाव डालेंगे, हम घेराव डालेंगे कि तुम्हें खड़ा होना पड़ेगा, हम अच्छे आदमी को भेजना चाहते हैं। और अच्छे आदमी को भेजने में हिन्दुस्तान को आगे के १० वर्षों तक कम-से-कम, **पार्टी की फिक्र छोड़ देनी चाहिये** कि वह आदमी किस पार्टी का है। वह कम्युनिस्ट है, कि सोशलिस्ट है, कि लीगी है, कि कांग्रेसी है, कि जनसंघी है, इसकी फिक्र छोड़ देनी चाहिये। एक ही शर्त है कि वह आदमी अच्छा है।

एक बार हिन्दुस्तान में अच्छा आदमी सत्ता में पहुंच जाये तो हम १० साल बाद यह भी विचार कर सकेंगे कि अच्छे समाजवादी को भेजें कि अच्छे काँग्रेसी को भेजें। अभी तो अच्छा आदमी ही प्रश्न है। अभी तो अच्छे आदमी को ही भेजना है। अभी यह सवाल नहीं है कि काँग्रेसी को भेजें कि जनसंघी को भेजें। क्योंकि अगर दोनों बुरे आदमी हैं, तो तुम किसी को भी भेजो, कोई फर्क नहीं पड़ता है। और आज हालत ऐसी है कि चाहे गलत आदमी किसी भी तरह का झंडा हाथ में लिये हो वे सब चचेरे भाई बहिन हैं, उनमें कोई फर्क नहीं है, उनमें जरा भी फर्क नहीं है। उनके लेबिल अलग हो सकते हैं, कि यह ११ नं० की बीड़ी है, यह २१ नं० की बीड़ी है, यह २३ नं० की बीड़ी है। लेकिन बीड़ी, बीड़ी है और खतरनाक है। इस बात पर जोर देने की जरूरत नहीं है कि किस नंबर की बीड़ी पीनी है, सवाल यह है कि बीड़ी पीनी है कि नहीं पीनी है, कि हम काँग्रेसी बीड़ी पियेंगे कि जनसंघी बीड़ी पियेंगे, यह सवाल नहीं है। सवाल यह है कि बीड़ी पीनी है कि नहीं पीनी है। कि हम बुरे आदमी को भेजना चाहते हैं कि नहीं भेजना चाहते। लेकिन राजनीतिज्ञ बहुत होशियार है, वह आपकी नजर से यह समस्या (प्राब्लम) हटा लेता है, वह यह समस्या हटा लेता है कि अच्छे आदमी को भेजना है कि बुरे को। वह एक नई समस्या खड़ी करता है। वह कहता है कि काँग्रेसी को भेजना है कि जनसंघी को।

मैंने सुना है कि अगर आप जर्मनी की होटल में जायें, तो वे खाने के बाद आपसे पूछेंगे कि आप चाय लेंगे। इसमें आपके समक्ष वे दो विकल्प छोड़ रहे हैं: हाँ या नहीं का। लेकिन फ्रांस में ऐसा नहीं है। वहाँ वे ऐसा नहीं पूछते। वे आपसे खाने के बाद पूछेंगे कि आप कॉफी लेंगे या चाय। इसमें वे आपके समक्ष कोई न कहने का अवसर नहीं दे रहे। ५० प्रतिशत मौके कॉफी के हैं और ५० प्रतिशत मौके चाय के हैं और बहुत संभावना इस बात की है कि आप दो में से एक चुन लेंगे। वे आपको चुनने का मौका नहीं दे रहे हैं कि मैं चाय लूंगा कि कॉफी लूंगा, कि आप सोचेंगे कि दूध लूं या कोको लूं। लेकिन "नहीं" का ख्याल वे आपके सामने नहीं रख रहे हैं, जिसको चुना जा सके। इसके प्रयोग करके देखे गये और पाया गया कि जिन होटलों में वे यह पूछते हैं कि आप चाय लेंगे, वहाँ चाय अथवा कॉफी कम बिकती है। जिन होटलों में वे यह पूछते हैं कि आप चाय लेंगे या कॉफी, वहां दोनों में से एक जरूर बिक जाता है।

दुनिया के राजनीतिज्ञ आपके सामने गलत विकल्प (आरटरनेटिव) पेश करते हैं, वे कहते हैं कि काँग्रेस को चुनियेगा कि जनसंघ को। सवाल यह है कि अच्छे आदमी को चुनना है कि गलत आदमी को। भले आदमी के हाथ मजबूत करने हैं या बुरे और गलत आदमी के हाथ मजबूत करने हैं। तो मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि आने वाले

दिनों में अगर भारत की जिन्दगी को हमें धार्मिक और अच्छा बनाना है तो हमें अच्छे आदमी को भेजने की फिक्र करनी चाहिये। हमें कोई चिंता नहीं करनी है कि वह किस दल का हो। **अच्छा आदमी किसी भी दल का हो, अच्छा होता है और बुरा आदमी किसी भी दल का हो बुरा होता है।** दल से कोई फर्क नहीं पड़ता है, लेकिन हमारा दुर्भाग्य है कि हम धर्म और राजनीति को अब तक अलग ही मानते रहे और इकट्ठा मानने की हमारी कल्पना अभी भी मजबूत नहीं हुई है। अभी भी हमें ऐसा नहीं लगता कि दोनों जुड़े हैं, अभी भी हमारा ख्याल यह है कि राजनीति एक अलग चीज है। चलने दो उसे, क्या बनता बिगड़ता है। लेकिन हमें पता नहीं कि सब कुछ बनता-बिगड़ता है।

हमारा खून, हमारे विचार, हमारा भाग्य, हमारा शरीर, हमारा भविष्य सब कुछ राजनीति तय कर रही है। हमें क्या पढ़ाया जाय कालेज में, स्कूल में, वह राजनीति तय कर रही है। हमारे बच्चों के मन कैसे निर्मित किये जायें, वह राजनीति तय कर रही है। रूस की राजनीति बदली। आज २० करोड़ का मुल्क है रूस। आज रूस में ईश्वर को मानने वाला एक आदमी खोजना मुश्किल है। क्योंकि ४० वर्षों में जो राजनीतिज्ञ वहाँ आये, उन्होंने कहा कि ईश्वर नहीं है। उन्होंने जो किताबें पाठ्यक्रम में रखीं, वे ईश्वर विरोधी हैं। उन्होंने जो पाठ्यक्रम बनाया वह आत्मा को नहीं मानता है। **२०–३० साल की शिक्षा के बाद रूस के २० करोड़ लोग मानने को राजी हो गये कि न कोई आत्मा है, न कोई परमात्मा।** तो फिर राजनीति से धर्म निरपेक्ष कैसे रह सकता है। यह कैसे संभव है। और जो लोग समझा रहे हैं कि राजनीति से कुछ नहीं लेना-देना है धार्मिक आदमी को, उन्हें पता नहीं है कि आने वाले २० वर्षों में अगर धर्म ने उत्सुकता नहीं ली, तो धर्म की पूरी की पूरी व्यवस्था को मटियामेट किया जा सकता है।

चीन ७० करोड़ का मुल्क है। राजनीति वहाँ साम्यवादी हो गई तो चीन के सारे मंदिर और मस्जिद खतरे में हैं। वहां के सारे आश्रम खतरे में हैं। वहाँ के धर्मग्रन्थ खतरे में हैं, वहाँ के साधु-संन्यासी, फकीर खतरे में हैं। आज चीन में किसी का जीवन सुरक्षित नहीं है। **आने वाले १० वर्षों में चीन साधु-संन्यासियों को समाप्त कर देगा।** चीन की पृथ्वी पर एक संन्यासी खोजने से नहीं मिलेगा, एक भिक्षु खोजने से नहीं मिलेगा। एक मंदिर और मस्जिद खोजने से नहीं मिलेगी। तो फिर राजनीति से धर्म कैसे निरपेक्ष रह सकता है? आज नहीं तो कल हिन्दुस्तान में भी यह होगा।

इसलिये जो धार्मिक लोग समझाते हैं कि अपने मंदिरों में पूजा करो, तुम्हें क्या करना है, राजनीति से अच्छे आदमी को क्या प्रयोजन है, उन्हें **पता नहीं है कि राजनीतिज्ञ के हाथ में कितनी ताकत है।** और इतनी ताकत उसके पास कभी भी नहीं थी जितनी

आज उसके हाथ में है। आज **चीन में माइन्डवाश** के लंबे आंदोलन चल रहे हैं। लाखों लोगों को पकड़ कर उनके दिमाग में जबरदस्ती जो हुकूमत डालना चाहती है, डाल रही है। आपको पता नहीं है कि आज इस तरह के रासायनिक ड्रग्ज खोज लिये गये हैं कि आपको **एक इंजेक्शन** दिया जाये और आपकी सारी पुरानी स्मृति मिटाई जा सकती है। **आपकी सारी स्मृति नई की जा सकती है।** एक आदमी जो ईश्वर को मानता था और समझता था कि परमात्मा है, उस आदमी को एक इंजेक्शन और कुछ रासायनिक द्रव्य देने के बाद उसकी स्मृति मिटाई जा सकती है, और उसको समझाया जा सकता है कि ईश्वर नहीं है और महीने, दो महीने के बाद वह बाहर आकर लोगों से कहेगा कि ईश्वर नहीं है, वह जो मैं समझता था, गलत समझता था।

आज चीन में वे यह सब कर रहे हैं, रूस में उन्होंने यह किया और सारी दुनिया में वह होगा। इसलिये धार्मिक आदमी अगर चुपचाप बैठा रहा तो पता नहीं कि वह किस जगह पर बैठा हुआ है। वह जगह नीचे से खिसक रही है। जिस जगह को वह सहारा समझे हुए है, वह बहुत दिन सहारा नहीं रहेगी। नाव में छेद हो गये हैं, वह डूबने के करीब है। **दुनिया में अगर धर्म को बचाना है, तो धार्मिक लोगों को हिम्मत के साथ खड़ा होना होगा और सत्ता के जगत् में प्रवेश करना होगा।**

मेरी अपनी दृष्टि में तो हिन्दुस्तान का भाग्य उसी दिन बदलेगा जिस दिन हिन्दुस्तान के साधु, संन्यासी और भिक्षु, हिन्दुस्तान के अच्छे और सज्जन लोग सारी राजनीति को अपने हाथ में ले सकेंगे, उसके पहले कभी भी हिन्दुस्तान में कोई सदाचरण की व्यवस्था नहीं हो सकती। लेकिन अच्छा आदमी तो भागता है। उस अच्छे आदमी पर तो विश्वास करना मुश्किल है, वह तो सोचता ही नहीं। वह तो विचार भी नहीं करता। उसकी कल्पना में तो ख्याल भी नहीं आता कि जिन्दगी को बदलने का उसका कोई भी जिम्मा है। अच्छा आदमी पीठ किये हुये खड़ा है। इसलिये जब मुझे कहा गया कि मैं जाऊँ और राजनीति और धर्म पर कुछ कहूं तो मुझे अच्छा लगा कि जरूर कुछ बातें कहने जैसी हैं।

संक्षिप्त में मैं अपनी बातें दुहरा दूं कि मैंने क्या कहा। मैंने आपसे यह कहा कि धर्म है आत्मा, राजनीति है शरीर। धर्म है विचार, राजनीति है क्रिया। धर्म है आकाश, राजनीति है पृथ्वी। न हम आकाश में जी सकते हैं, न हम पृथ्वी पर जी सकते हैं। हमारे पैर पृथ्वी पर होने चाहिये और हमारा सिर आकाश में उठा हुआ होना चाहिये। **हमारा सिर धर्म से संबंधित होना चाहिये और हमारे पैर राजनीति से।** हमारे जीवन की सारी क्रिया राजनीति के बिना नहीं चल सकती। और हमारी आत्मा का विकास धर्म के बिना नहीं हो सकता। अगर ऊपर उठना

है तो आकाश का भ्रमण करना होगा, अगर संभल कर खड़े रहना है तो पृथ्वी पर मजबूत पैर जमे हुये होना चाहिये।

हिन्दुस्तान के पैर पृथ्वी पर हमेशा कमजोर रहे। इसलिये एक हजार साल तक हमने गुलामी झेली – इतने बड़े मुल्क ने एक हजार वर्षों तक! साधारण सी ताकत के लोग आये और हमें गुलाम बना लिया। उसका कारण क्या था? उसका बड़ा कारण यह था कि हिन्दुस्तान की धार्मिक जनता यह मानती है कि राजनीति से हमें क्या लेना-देना है। हिन्दुस्तान का बड़ा हिस्सा, जन-संख्या का बड़ा भाग यह मानता था कि हमें कोई प्रयोजन नहीं। जब जनता इतनी उपेक्षा रखती हो तो बहुत खतरनाक है यह बात। अगर कल हिन्दुस्तान पर चीन हावी हो जाये तो मैं आपसे कहता हूं कि हिन्दुस्तान के ७५ प्रतिशत लोग अभी भी राजनीति में कोई उत्सुकता नहीं रखते। अगर कल हिन्दुस्तान पर चीन आ जाये तो वे लोग तमाशबीन की तरह देखेंगे और वे कहेंगे कि अच्छा चीन आ गया, तो वे देखेंगे कि देखो अब क्या होता है। पहले अंग्रेज थे, फिर कांग्रेस आई, अब फिर चीनी कम्युनिस्ट आ गये। अब देखो आगे क्या होता है। वे खड़े होकर देखेंगे, जैसे वे तमाशबीन हैं, जैसे वे दर्शक हैं।

दूसरे महायुद्ध में जर्मनी ने हमला किया हॉलेन्ड के ऊपर। हॉलेन्ड छोटा मुल्क है और गरीब मुल्क है। हॉलेन्ड की गरीबी, हॉलेन्ड की कमजोरी कई कारणों से है। बड़ा कारण तो यह है कि हॉलेन्ड की जमीन समुद्र से नीची है, समुद्र ऊंचा है और जमीन नीची है। तो हॉलेन्ड के गाँवों को दीवालें बनाकर समुद्र से रक्षा करनी पड़ती है। हॉलेन्ड की आधी ताकत समुद्र से बचाव करने में नष्ट हो जाती है। हॉलेन्ड के पास बड़ी फौजें नहीं हैं, हॉलेन्ड के पास बड़ी मशीनगन नहीं है, हॉलेंड के पास हवाई जहाज नहीं है, युद्ध का सामान नहीं है। जर्मनी ने तय किया कि हॉलेन्ड को तो मिनटों में जीता जा सकता है। जर्मनी के सामने हॉलेन्ड कैसे टिकता! जर्मनी का हमला हुआ और हॉलेन्ड के लोगों ने सोचा, हम क्या करें? तो हॉलेन्ड के लोगों ने जो बात सोची वह सोचने जैसी है, समझने जैसी है। हिन्दुस्तान वैसी बात कभी नहीं सोच सकता। तो उन्होंने सोचा कि हम तो गुलाम हो जावेंगे, लेकिन गुलाम होकर जिन्दा रहना ठीक नहीं। आजाद रहते हुए जिन्दा मर जाना बेहतर है। उन्होंने कहा : जिस गाँव पर जर्मनी का हमला हो, उस गांव के लोग उस गाँव की दीवाल तोड़ दें। पूरा गाँव समुद्र में डूब जाये और साथ में जर्मनी की फौजें भी डूब जायें। हम अपने गाँव डुबाते चले जायेंगे, जो गाँव हारेगा उसको डुबा देंगे। हम पूरे मुल्क को डुबा देंगे, समुद्र के नीचे। लेकिन हॉलेन्ड नहीं बचेगा, एक बच्चा नहीं रहेगा हॉलेन्ड का जिन्दा, लेकिन गुलाम हम नहीं होंगे। तीन गाँवों पर हिटलर की फौजें गईं और वापस लौट गईं। हिटलर ने कहा : ऐसे मुल्क से लड़ना मुश्किल है। तीन गाँव डूब गये, फौजें भी डूब गईं,

तीन गांव पानी के नीचे आ गये। और हिटलर ने पहली दफे अपनी डायरी में लिखवाया कि 'आज मुझे पता चला कि संगीनों, बंदूकों और बमों से भी ज्यादा ताकतवर लोगों की आत्मा होती है।' **अगर लोग मरने को तैयार हैं तो उनको दुनिया से कोई गुलाम नहीं बना सकता।** कौन बना सकता है गुलाम !

४० करोड़ लोगों को ३ करोड़ लोग गुलाम बनाये रखे, हजारों मील दूर बैठ कर हुकूमत करते रहे और हम पर हुकूमत चलती रही। राजनीतिज्ञ हमें समझाते हैं हममें फूट थी, इस कारण यह हुकूमत चली। गलत समझाते हैं। राजनीतिज्ञ गलत समझाते हैं, सरासर झूठ समझाते हैं। फूट वगैरह कुछ भी नहीं थी। जितनी फूट हममें है, दुनिया में सब तरफ है। **असली बात यह थी कि यहाँ की जनता के मन में यह भाव था कि राजनीति से हमें क्या लेना-देना है।** क्या करना है। कोई भी राजा दिल्ली में बैठे, हमको क्या फर्क पड़ता है। मेहतर को अपने पाखाने धोने पड़ेंगे, चाहे मुगल बादशाह हो, चाहे हिन्दू बादशाह हो, चाहे अंग्रेज बादशाह। चमार को जूते सीने पड़ेंगे। किसान को खेती का काम करना पड़ेगा, हल-बखर चलाना पड़ेगा। हमको क्या फर्क पड़ता है। हमारी जिन्दगी में क्या फर्क आता है। और हिन्दुस्तान में जो लोग शिक्षा देने वाले थे, साधु संन्यासी, उन्होंने बिल्कुल बात भी नहीं उठाई, एक शब्द भी नहीं उठाया। अगर कोई हिन्दुस्तान का इतिहास उठाकर देखेगा एक हजार वर्ष का, तो वह पायेगा कि यहां के संतों ने एक बार भी नहीं कहा कि लगा दो आग इस गुलामी में। तो दुनिया के लोग बाद में सोचेंगे कि संत बड़े कमजोर और नपुंसक रहे होंगे। उनमें कोई बल न रहा होगा। क्या आत्मा की बातें करते रहे होंगे, जो गुलामी को नहीं तोड़ सकते? उसका कुल कारण इतना था कि **हमने धर्म को राजनीति से कभी संबंधित नहीं माना है।** इसलिये मैं कहता हूं **धर्म के बिना राजनीति केवल मरा हुआ शरीर है और राजनीति के बिना धर्म केवल एक प्रेत-आत्मा है,** जिसके पास कोई शरीर नहीं है। भूत की तरह जो आत्मा भटकती है, जिसका जिंदगी में कोई स्थान नहीं रह जाता।

अतः इन दोनों में संबंध अनिवार्य है। ये दोनों संयुक्त हों और संयुक्त होने में भी सदा ध्यान रहे, धर्म सदा ऊपर रहे, राजनीति सदा नीचे रहे। धर्म सिर है, राजनीति है पैर। धर्म आत्मा है, शरीर है राजनीति। राजनीति कभी धर्म के ऊपर नहीं बिठाई जा सकती। धर्म जीवन का लक्ष्य है, **राजनीति, साधन है। धर्म है साध्य, राजनीति है साधन। धर्म है मंजिल, राजनीति है मार्ग।** मार्ग कभी मंजिल के ऊपर नहीं हो सकता। अगर यह हमारे ध्यान में हो तो हम आनेवाले दिनों में अच्छे आदमी को ताकत दें, बल दें, अच्छे आदमी के लिए जीवन को बदलने की और सत्ता को हाथ में लेने की सुविधा जुटायें तो कोई कारण नहीं कि आने वाला भविष्य भारत का स्वर्णिम और सुन्दर नहीं हो सकता है।

लेकिन जैसा आज चल रहा है, ऐसा अगर आगे भी चलता है तो भारत रोज अंधेरे में गिरता चला जायेगा। और मैं आपको कह देना चाहता हूं कि अगर बुरे व्यक्तियों के राज्य से भारत को बचाना हो तो भारत के साधु और संन्यासियों को हिम्मत करनी पड़ेगी। चाहे उनका मोक्ष खो जाये, चाहे उनका परलोक बिगड़ जाये। फिर जन्म ले लेना। जन्म अनन्त हैं। कोई जल्दी भी क्या है इतनी। बहुत जन्म पड़े हैं। बहुत जन्मों की सुविधा है। फिर उपाय कर लेना साधना का। लेकिन एक बार हिन्दुस्तान के सारे अच्छे आदमियों को इकट्ठे होकर एक बीस साल हिन्दुस्तान के भाग्य को सुन्दर बनाने की कोशिश जरूर करनी चाहिये।

ये थोड़ी सी बातें मैंने रखीं। मेरी बातों से सहमत होना जरूरी नहीं है। **अगर आप मेरी बातों को सोचेंगे भी तो मेरा काम पूरा हो जाता है। हिन्दुस्तान सोच भी नहीं रहा है।** जय महात्मा गांधी की, बस इतना काम है हमारा। सोचना विचारना नहीं है। गांधी पर बस जय जयकार करो, लेकिन सोचो मत कि गांधीजी ने क्या किया और क्या नहीं किया ! सोचना मत कि गांधीजी से क्या भूल हो गई ! सोचो मत कि गांधीजी की भूल कहीं महंगी तो नहीं पड़ गई है और उसे बदलने के लिये कुछ किया जाय या नहीं किया जाये ! मैंने जो कहा, मुझसे सहमत होने की जरा भी जरूरत नहीं है। लेकिन मेरी बातों पर अगर सोचना हो सकता है, सोच विचार पैदा हो तो मार्ग स्पष्ट हो सकता है, और जिंदगी को बदलने में हम समर्थ हो सकते हैं।

*

भगवान श्री रजनीश हिन्दी साहित्य

	मू. रु.
१ महावीर मेरी दृष्टीमें	३०-००
२ महावीर - वाणी	३०-००
३ जिन खोजा तिन पाईयां	२०-००
४ ईशावास्योपनिषद्	१२-००
५ प्रेम है द्वार प्रभुका	८-००
६ आचार्य रजनीश समन्वय, विश्लेषण, संसिद्ध	७-५०
७ घाट भुलाना वाट बिनु	७-००
८ समुन्द समाना बुंद में	७-००
९ सूली ऊपर सेज पिया की	७-००
१० सत्यकी पहली किरण	६-००
११ मैं कहता आँखन देखी	६-००
१२ अन्तर्वीणा	६-००
१३ ढाई आखर प्रेमका	६-००
१४ संभावनाओं की आहट	६-००
१५ संभोग से समाधि की ओर	६-००
१६ साधना-पथ	५-००
१७ अहिंसा दर्शन	१-००
१८ गहरे पानी पैठ	५-००
१९ अमृत कण	१-००
२० प्रेम के फूल	३-५०
२१ मिट्टी के दिये	५-००

	मू. रु.
२२ बिखरे फूल	१-००
२३ अन्तर्यात्रा	५-००
२४ गीता दर्शन	५-००
२५ सत्य की खोज	४-००
२६ समाजवाद से सावधान	४-००
२७ पथ के प्रदीप	४-००
२८ मैं कौन हूँ ?	३-००
२९ क्रान्ति की वैज्ञानिक प्रक्रिया	१-००
३० काम योग धर्म और गांधी	३-००
३१ प्रेम और विवाह	१-५०
३२ विद्रोह क्या है ?	१-५०
३३ प्रगतिशील कौन ?	१-५०
३४ ज्योतिष अर्थात् अध्यात्म	१-५०
३५ ज्योतिष : अद्वैत का विज्ञान	१-५०
३६ सिंहनाद	१-५०
३७ सारे फासले मिट गये	१-२५
३८ मन के पार	१-००
३९ धर्म और राजनीति	१-००
४० युवक और यौवन	१-००
४१ अवधिगत संन्यास	०-३०
४२ नव संन्यास	०-३०

पुस्तकें मिलने का पता :—

जीवन जागृति केन्द्र

३१, इजराइल मोहल्ला, भगवान भुवन, मस्जिद बंदर रोड, बम्बई—९.

फोन : ३२७६१८/२१

A—१, वुडलॅन्ड ॲपार्टमेंट, पेडर रोड, बम्बई—२६. फोन : ३८११५९